❖ विनय

कवि परिचयः– सूरदास हिंदी काव्य–जगत के सूर्य माने जाते हैं। कृष्ण–भक्ति की अजस्र धारा प्रवाहित करने में उनका विशेष योगदान है। उनके जीवन –वृत्त के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। अधिकतर विद्वान सूरदास का जन्म सन् 1483 ई.(संवत्1540वि0) और निधन संवत् 1620 वि0 मानते हैं। उनका जन्म दिल्ली के निकट सीही नामक ग्राम के एक निर्धन सारस्वत ब्राह्मण परिवार में हुआ। वे जन्माध थे। उनका कंठ बडा मधूर था। वे पद–रचना करके गाया करते थे। बाद में वे आगरा और मथुरा के बीच स्थित गऊघाट पर जाकर रहने लगे। वहीं श्री वल्लभाचार्य जी के संपर्क में आए और पुष्टिमार्ग में दीक्षित हुए। उन्हीं की प्रेरणा से सूरदास ने दास्य एवं दैन्य भाव के पदों की रचना छोडकर वात्सल्य, माधुर्य भाव और सख्य भाव के पदों की रचना करना आरंभ किया। पुष्टिमार्ग के अष्टछाप भक्त कवियों में सूरदास अग्रगण्य थे। पुष्टिमार्ग में भगवान की कृपा या अनुग्रह का अधिक महत्व हैं इसे काव्य का विषय बनाकर सूरदास अमर हो गए। जब सूरदास का अंतिम समय निकट था तब भी विट्ठलनाथ जी ने कहा था– पुष्टिमार्ग को जहाज जात है, जाय कछू लैनो होय सो लेउ।

काव्य परिचयः–सूरदास जी की रचनाओं में सूरसागर, सूरसारावली और साहित्य लहरी को ही विद्वानों ने प्रामाणिक रूप से मान्यता दी है। परन्तु सूरसागर की जितनी ख्याति हुई है उतनी शेष दो कृतियों को प्राप्त नही हुई।

भाव पक्षः– सूरदास कृष्ण भक्ति की सगुण शाखा के कवि थे। उनकी भक्ति को दो भागों में विभाजित करके देखना अधिक उपयुक्त होगा– एक ,श्री वल्लभाचार्य जी से साक्षात्कार के पूर्व की भक्ति जिसमें दैन्य भाावना और सूर की गिडगिडाहट अधिक है। दूसरी ,श्री वल्लभाचार्य जी से संपर्क के बाद की भक्ति अर्थात् जिसमें सख्य, वात्सल्य और माधुर्य भाव की भक्ति है। उन्होंने विनय, वात्सल्य, और श्रृँगार तीनों प्रकार के पदों की रचना की थी। उन्होनें संयोग और वियोग दोनों प्रकार के पद रचे। सूरसागर का भ्रमरगीत प्रसंग वियोग श्रृंगार का श्रेष्ठ उदाहरण है। सूर का वात्सल्य वर्णन हिंदी साहित्य की एक अमूल्य निधि है। ये वात्सल्य का कोना–कोना झाँक आए है।

कला पक्ष :– सूरदास की काव्य भाषा ब्रज भाषा है। लोकोक्ति और मुहावरों का भी सहज रूप से प्रयोग किया है। उनके पदों में लक्षणा और व्यंजना शब्द शक्तियों का समुचित प्रयोग मिलता है। सूरसारावली में दृष्टिकूट पद है, जो दुरूह माने जाते है। विरह वर्णन में व्यंजना शब्द –शक्ति का प्रयोग अधिक है। सूर के सभी पद गेय हैं। उनकी शैली में भी विविधता है। उन्होंने अनुप्रास ,यमक ,श्लेष, उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि अलंकारों का प्रयोग किया है।

पाठ परिचय :–प्रस्तुत संकलन में सूरदास के विनय, बाल–वर्णन और भ्रमरगीत के पद संकलित है।विनय के पदों में कवि ने अपनी दीनता व्यक्त की है। उन्होंने अपनी तुच्छता का विस्तृत वर्णन करते हुए दीनानाथ अशरण–शरण, सर्व शक्तिमान भगवान की असीम कृपा का गुणगान किया है और उनसे भक्ति की याचना की है। उनकी भक्ति का मूलाधार पुष्टिमार्गीय भक्ति हैं, जिसमें सख्य भाव की बहुलता है।

सूर बाल–मनोविज्ञान के पंडित थे। बाल–क्रियाओं का जितना विशद् वर्णन सूर–काव्य में मिलता है उतना अन्यत्र दुर्लभ है। वात्सल्य –वर्णन का कोई क्षेत्र उनसे नहीं बचा है। वात्सल्य का मुख्य केन्द्र यशोदा का हृदय है। उनकी चेष्टाएँ माता के हृदय में आशा– आकांक्षाओं का संचार करती है।

भ्रमरगीत विप्रलभं श्रृंगार का काव्य है। इसमें विरह की सभी दशाओं का चित्रण है।यह एक उपालंभ काव्य है। विरह–व्यथित गोपियों के तर्क के कारण उद्भव ब्रह्म और योग–साधना को भूल जाते हैं और सगुण भक्ति को स्वीकार कर लेते है।

(1) मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै ?

जैसे उडि जहाज को पंछी फिरि जहाज पर आवै।।

BY- MAHESH KUMAR BAIRWA (LECTURER) 8440992186 GHSS GUDHLIYA

कमल –नैन कौ छाँडि महातम, और देव को ध्यावै

परम गंग को छाँडि पियासो, दुरमति कूप खनावै।।

जिहि मधुकर अंबुज–रस चाख्यौ, क्यों करील फल भावै।।

सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै।।

कठिन शब्दार्थ :– अनत–अन्यत्र, और कहीं। कमल नैन– कमल जैसे नेत्र वाला। महातम–अंधा,मुर्ख। दुरमति– दुर्बुदि, बुद्विहीन। कूप– कुआं। मधुकर–मोर। अंबुज– कमल। करील–एक झाडी जिस पर टेंटी नामक कडुआ फल उत्पन्न होता है। भावै– अच्छा लगना। कामधेनु– एक कल्पित गाय, जो सारी इच्छाऐं पूरी करती है।

- विनय – सुरदासजी सारी इच्छाऐं पूर्ण करने में समर्थ भगवान को छोडकर किसी और का भजन ध्यान करना उचित नहीं समझते।
- **व्याख्या–** सूरदाजी कहते है कि भगवान के भजन को छोडकर किसी और प्रकार से मेरे मन को सुख कैसे मिल सकता है? जिस प्रकार समुद्र के जहाज पर बैठा हुआ पक्षी आश्रय पाने की इच्छा से उससे उडकर जाए और किनारा प्राप्त न कर विवश होकर फिर जहाज पर आ जाये, उसी प्रकार मेरे मन की स्थिति है। उसे भी भगवान के अतिरिक्त और किसी से सुख नहीं मिलता है। महिमाशाली कमल नेत्र भगवान को छोडकर यदि कोई अन्य देवता का ध्यान करता है, तब तो समझ लो कि उसका व्यवहार उस मुर्ख व्यक्ति की तरह का है, जो परम गुणों से युक्त गंगा को छोडकर प्यास मिटाने के लिए कुआं खुदवाता है। सुरदाजी कहते हैं कि जिस भौरें ने कमल के पराग का पान कर लिया हो , उसके स्वाद को चख रखा हो , वह करील के फल को क्यों खाना चाहेगा। उसे करील का फल अच्छा ही नहीं लगेगा। भगवान की भक्ति का आनंद जिसने प्राप्त कर लिया हो उससे अन्य किसी भी विधि से वैसा आनन्द प्राप्त ही नहीं होगा। वह भक्ति छोडेगा ही नहीं। सूरदासजी कहते हैकि कामधेनु की तरह सब प्रकार की इच्छाऐं पूर्ण करने में समर्थ भगवान को छोडकर बकरी की तरह अन्य देवी देवताओं की उपासना कौन करना चाहेगा, अर्थात् भगवान को छोडकर अन्य किसी की उपासना करना मुर्खता ही है। अतएवं सुरदास अपने आराध्य को छोडकर किसी अन्य की उपासना नहीं करना चाहते।
- सूरदास की अनन्य भक्ति की भावना का प्रकटीकरण।
- पद में अनुप्रास, आक्षेप और उपमा अंलकार है।
- कवि की कल्पनाशीलता प्रशंसनीय है। वर्णन में लक्षणा–व्यंजना की विशेषताऐं है।

(2) अवगति–गति कछू कहत न आवै।

ज्यों गुँगे मीठे फल कौ रस, अंतरगत ही भावै।।

परम स्वाद सबही जु निरन्तर, अमित तोष उपजावै।

मन–बाणी कौं अगम–अगोचर, सो जानै जो पावै।।

रूप–रेख गुण जाति–जुगुति बिनु, निरालंब मन चक्रित धावै।

सब विधि अगम विचारहिं तातैं, सूर सगुन–लीला पद गावै।।

- **कठिन शब्दार्थ** :–अविगत–अज्ञात, निराकार,जिस तक पहुंचा न जा सके। गति –व्यवहार, स्वभाव। अन्तरगत–मन में। भावैं–अनुभव होता है। परम– अत्यन्त। स्वाद –आनंद। तोष– संतुष्टि, तृप्ति। अमित– सीमारहित। उपजावै– उत्पन्न करता है। अगम– पहुंच से बाहर। अगोचर– इन्द्रियों से परे। जाति– पहचान। जुगुति–युक्ति, उपाय। निरालंब– बिना सहारे के , असहाय। उपायहीन। चक्रित'–चकराया हुआ, भ्रम में पडा हुआ। अगम– अगम्य, जिसे जाना न जा सके। सगुन–लीला– सगुण या साकार रूप में (श्रीकृष्ण के रूप में) की गई लीलाऐं। तातै– इस कारण।

- इसमें वे निराकार ब्रह्म के ध्यान में आने वाली कठिनाइयों का ,उसकी अनुभूति का वर्णन कर रहे है। वे इस बारे में बतला रहे हैं कि उन्हें सगुण की उपासना क्यों पसंद है?
- **व्याख्या–**सूरदासजी कहते हैं कि जिसके बारे में कुछ जानने में नहीं आता, उस निराकार ब्रह्म के बारे में कुछ भी कहना कठिन है। यह काम उसी प्रकार कठिन है जिस प्रकार गुँगा व्यक्ति किसी मीठे फल का स्वाद चखकर उसका भीतर तो अनुभव करे, किन्तु बोलकर उसे बता न सके। निराकार के ध्यान का स्वाद महान् होता है, वह निरन्तर आनंद प्रदान करने वाला होता है, अपार संतोष प्रदान करने वाला हेाता है। लेकिन मन उस तक पहुंच नहीं पाता, वाणी उसका वर्णन नहीं कर सकती। निराकार को प्राप्त करना, उसे समझ पाना कठिन है। उसे तो जिसने प्राप्त कर लिया है बस वही जानता है। उसका न तो वर्णन किया जा सकता है और न सुनने वाला उसके बारे में कुछ समझ सकता है। निराकार ब्रह्म का कोई रूप, कोई रेखा, गुण , पहचान नहीं है। उसे समझने एवं पाने की कोई युक्ति भी नहीं है। ऐसे ब्रह्म का ध्यान करने पर मन चकरा जाता है, इधर उधर भटकता रहता है। सूरदासजी कहते है। कि उस निराकार ब्रह्म को सब प्रकार से ही पहुंच से परे मानकर मैं तो सगुण भगवान की ही लीलाओं के बारे में पद गाया करता हूं। सगुण श्रीकृष्ण भगवान् ने जो लीलाऐं की है, मैं उन्हीं लीलाओं का गान करता हूँ।यही काम सरल है, निराकार का ध्यान कठिन है।
- सूरदास सगुण भगवान श्रीकृष्ण के भक्त है। उन्होने निराकार ब्रह्म की उपासना को कठिन तथा सगुण की उपासना को सरल माना है।
- निराकार के ध्यान का आंनद केवल अनुभव करने की चीज है। सगुण की तो लीलाओं का भी गान कर सकते हैं जो सरल काम है।
- इस पद में अनुप्रास, उपमा और काव्यलिंग अलंकार है ब्रजभाषा का माधूर्य गेयता के अनुरूप है।

(3) छाँडि मन हरि विमुखन कौ संग।

जाके संग कुबुद्धि उपजै परत भजन में भंग।।

कहा भयौ पय, पान कराये विष नहिं तजत भुजंग।

कागहि कह्ना कपूर खवाए, स्वान न्हवाए गंग।।

खर को कहा अरगजा लेपन मरकट भूषण अंग।

गज को कहा न्हवाये सरिता बहुरि धरै गहि छंग।।

पहन पतित बान नहिं भेदत रीतौ करत निषंग।

'सूरदास' खल कारी कामरि चढै न दूजो रंग।।

- **कठिन शब्दार्थ** :–छाँडि– छोड दे। कौ –का। हरि विमुख– भगवान की भक्ति में रूचि न लेने वाला। कुबुद्धि–बुरे भाव या विचार।भंग– बाधा। पय–दूध। भुंजग– सांप। कागहि–कोए को। स्वान –कुत्ता। खर –गधा। अरगजा –सुंगधित पदार्थ जो कपूर, केसर और चंदन को लेकर बनाया जाता है। मरकट–बंदर। गज–हाथी। सरिता–नदी। बहुरि– फिर। गहि–लेकर। छंग–धूल। पाहन–पत्थर। पतित–गिरकर। रीतौ–रिक्त ,खाली । निषंग– तरकश। खल– दुष्ट। कामरि– कम्बल।
- इसमें भक्त सुरदासजी कुसंग को भक्ति की दृष्टि से बाधक मानते है। बुरे लोग सुधरते नहीं है, उलटे उनके साथ रहकर भजन करने की ओर ध्यान भी नहीं जाता है। यहां कुसंग के बारे में कई तरह से बताया गया है।
- **व्याख्या–सूर** कहते है–हे मेरे मन! तू भगवत चर्चा से दूर रहने वाले और सांसारिक चर्चाओं में लगे रहने वाले लोगों का साथ छोड दे। ऐसे लोगों का संग करने से बुरे विचार उत्पन्न होते है तथा भगवान की भक्ति में बाधा पडती है। ऐसे लोगों को सुधारना असम्भव है। साँप को कितना ही दूध पिलाओ, उसका विष कभी दूर नहीं हो पाता, अपितु

और बढता है। इसी प्रकार मांस आदि मलिन वस्तुओं का भक्षण करने वाले कौए को कितना ही सुगंधमय कपूर चुगाओं, वह अपना स्वभाव नहीं छोडता। कुत्ते को गंगा में स्नान कराने से वह गंदे स्थान पर बैठना और अपवित्र वस्तुऐं खाना नहीं छोडता। गधे का स्वभाव धूल में लोटने का है।उसके शरीर पर कपूर, केसर तथा चंदन से बना अत्यन्त सुगंधित अरगजा का कितना भी लेप करो, वह धूल में लोटे बिना नहीं मानेगा। ऐसे ही बंदर का स्वभाव हर बस्तु को तोडने फोडने का है , उसे सुन्दर और बहुमूल्य आभूषण पहना देने से क्या वह सुधर जाएगा? नहीं ,वह उन आभूषणों को भी छिन्न भिन्न कर डालेगा। हाथी को धूल से स्नान करना बहुत प्रिय लगता है, उसे नदी में कितना भी मलमल कर स्नान कराओं, वह बाहर आते ही सूंड में धूल लेकर अपने अंगों पर डालना आरम्भ कर देता है। पत्थर पर कितने भी बाण चलाऐ जाए, वे उसमें छेद नहीं कर सकते। सारा तरकश भी बाणों से खाली कर दो, तब भी कोई बाण पत्थर को नहीं भेद पाएगा। सूरदास कहते है भक्तजनों! इसी प्रकार दुष्ट हरि विरोधियों का स्वभाव भी काली कमली (कम्बल) के समान होता है। इन पर हरि चर्चा रूपी रंग कभी नहीं चढ पाता। अतःऐसे लोगो की संगति त्याग देना ही बुद्विमानी है।

(4) अब कै राखि लेहू भगवान।

हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम डरिया, पारधि साधे बान।

ताकै डर तैं भज्यौं चहत हौं, ऊपर ढुक्यो सचान।

दुहूँ भाँति दुख भयौं आनि यह , कौन उवारै प्रान ?

सुमिरत ही अहिं डस्यौ पारधी, सर छुट्यौ संधान।

सूरदास सर लग्यौ सचानहिं, जय–जय कृपानिधान।।

- **कठिन शब्दार्थः–** अब कै– अब की बार। हौं–मै।राखि लेहु–रक्षा करके। द्रुम–वृक्षर। पारधि–बहेलिया, चिडिमार, पक्षियों का शिकारी। ताकै–उसके। भज्यौ चहत– भागना चाहता है। ढुक्यों–झपटा मारने को मंडरा रहा है। सचान–बाज पक्षी। दुहूँ दोनों ।आनि–आकर। अहि–सर्प ।संधान–लक्ष्य,। धनुष पर चढा हुआ बाण।
- सुरदास जी ने भगवान से अपनी रक्षा के लिए प्रार्थना की है। उन्होनें स्वयं को संकटग्रस्त और असहाय दिखाकर भगवान की कृपा प्राप्त करनी चाही है।
- **व्याख्या–** सूरदास जी कहते हैं कि हे भगवान! इस बार तो आप मेरी रक्षा कर ही लीजिए। मेरी स्थिति उस अनाथ पक्षी की तरह हैं जो वृक्ष की डाली पर बैठा हो, नीचे से बहलिया उस पर बाण चलाना चाहता हो और ऊपर से बाज उस पर झपटने को तैयार बैठा हो।वृक्ष पर बैठे हुए पक्षी को ये दोनों ही स्थितियां कष्टदायी होती है। उसे अपने प्राण बचाने वाला कोई नहीं दिखाई देता है तो उसका कष्ट और बढ जाता है। वह स्वयं को अनाथ महसूस करता है। तब वह आत्मरक्षा के लिए भगवान का स्मरण करता है और भगवान का स्मरण करते ही बहेलिये को सांप डस लेता है, इससे उसका निशाना चूक जाता है और बाण ऊपर बाज पर लग जाता है। सूरदास कहते है कि हे कृपानिधान! थ्जस तरह आपने उस पक्षी की रक्षा की उसी प्रकार आप मेरे ऊपर कृपा कीजिए और मुझे संकट से उबार लिजिए। कृपानिधान भगवान की जय हों।
- सूरदासजी जन्ममरण के चक्र में फंसे रहने कोबडा कष्ट मानते हैं । इनसे छुटकारा भगवान की भक्ति द्वारा ही मिल सकता है। भक्ति करने वालों को भगवान इस संकट से मुक्त कर देते है।
- पद की भाषा ब्रज है। वर्णनात्मक शैली है। वर्णन में चित्रात्मकता है।

बाल–लीला

(1) मैया, मैं तो चंद–खिलौना लैहौं।

जेहौं लोटि धरनि पर अवहि, तेरी गोद न ऐहौं।।

सुरभी को पय–पान न करिहौं, बेनी सिर न गुहैहौं।

ह्वै हौं पूत नंद बाबा कौ, तेरौ सुत न कहै हौं।।

आगे आउ, बात सुन मेरी, बलदेवहिं न जनैहौं।

हँसि समुझावति, कहति जसोमति, नई दुलहनिया दैहौं।।

तेरी सौं, मेरी सुनि मैया, अवहिं वियाहन जैहौं।

सूरदास ह्वै कुटिल बराती ,गीत सुमंगल गैहौं।।

- **कठिन शब्दार्थ :–** चंद खिलौना–चंद्रमारूपी खिलौना। लैहौं– लूंगा। धरनि– धरती। सुरभी – गाय। पय–दूध। बेनी–चोटी। गुहैहौं– गुंथवाऊंगा। ह्वै हो– होऊंगा। जनैहौं– बतलाना। वियाहन– विवाह करने । कुटिल –टेढा, कपटी।
- **व्याख्याः–** बालक कृष्ण यशोदा से जिद करने लगते हैं कि मैया मैं तो चन्द्रमा को ही खिलौना के रूप में लुंगा। यदि तू मेरी बात नहीं मानेगी तो मैं इसी समय धरती पर लौट जाऊंगा और तेरी गोद में नहीं आऊंगा।मैं गाय का दूध भी नहीं पीऊंगा और सिर पर बालों की चोटी भी नहीं गुंथवाऊंगा। तब मैं नंदबाबा का ही पुत्र कहलाऊंगा। और तेरा पुत्र नहीं कहलाऊंगा। बालक कृष्ण की ये बातें सुनकर यशोदा ने उन्हें मनाने के लिए कहा कि तू आगे आ और मेरी बात सुन। तू मेरी कही गई बातों को बलराम से मत कहना। यशोदा हंसती हुई कृष्ण को समझाती है और कहती है कि मैं तेरे लिए नई दुलहन लाऊँगी। कृष्ण माँ की ये बातें सुनकर कहते हैं कि माँ मेरी बात सुन। मै तेरी शपथ खाकर कहता हूँ कि मुझे तेरी बातें स्वीकार है। मैं अभी विवाह करने जाने के लिए तैयार हूँ। सूरदासजी कहते हैं कि मैं भी भगवान बालक कृष्ण की बारात में कुटिल बाराती बनकर मांगलिक गीत गाऊंगा।
- बाल हठ की प्रवृति का वर्णन है। वर्णन बाल मनोविज्ञान के अनुरूप है।
- यहां अनुप्रास एवं रूपक अलंकार है।

(2) जब हरि मुरली अधर धरी।

गृह–व्यौहार तजे आरज–पथ, चलत न संककरी।।

पद–रिपु पट अंटक्यौ न सम्हारति, उलट न पलट खरी।

सिब –सुत–वाहन आई मिले हैं,, मन–चित–बुद्धि हरी।।

दुरि गए कीर, कपोत,मधूप, पिक साराँग सुधि बिसरी।

उडुपति, विद्रुम बिम्ब खिसाने, दामिनि अधिक डरी।।

मिलि हैं स्यामहिं हंस–सुता–तट, आनँद –उमँग भरी।

सूर स्याम कौं मिली परस्पर, प्रेम–प्रवाह ढरी।।

- **कठिन शब्दार्थः–**मुरली –बंशी। अधर–होठ। गृह–व्यौहार–घरेलु कार्य। आरज–पथ– आर्य पथ, श्रेष्ठ आचरण। संककरी– शंका की । पद–रिपु– काँटा। पट–वस्त्र। सिब –सुत –वाहन– शिव के पुत्र कार्तिकेय का वाहन मोर। दुरि गए– छिप गये। कीर–तोता। कपोत–कबूतर। मधुप–भौंरा। पिक–कोयल। सांरग–सर्प। उडुपति– चन्द्रमा। विद्रुम– मुँगा। बिम्ब–बिम्बाफल जो भीतर से लाल होता है। दामिनि– बिजली। हंस–सुता–तट– यमुना के किनारे पर।
- इसमें कृष्ण द्वारा बंशी बजाये जाने पर गोपिकाओं पर जो प्रतिक्रीया हुई यहां उसी का वर्णन है।

- **व्याख्याः–** सूरदास वर्णन करते हैं कि जब कृष्ण ने वंशी अपने होठों पर रखी तो गोपियों ने उसका मधुर स्वर सुनकर घर के काम–काज छोड दिये ,लोक–मर्यादा को भी भूल गई और कृष्ण की ओर अर्थात् पास जाने में किंचित् मात्र भी शंका नहीं की। उनके वस्त्रों में काँटा उलझ गया तो उसे भी उन्होनें न सम्भाला और वे जल्दी आगे बढ गई। उन्होनें काँटें –आदि से जैसे–तैसे मुक्त होने का प्रयत्न किया। रास्ते में मिले मयुरों ने उनके (मयुर पिच्छाधारी का स्मरण दिलाकर) मन, बुद्धि और चित्त का हरण कर लिया । गोपियों के शरीर के अंगो के सौन्दर्य के आगे स्वयं को घटिया मानकर उनके अंगों के उपमान तोता, कबूतर, भौरें , कोयल, सर्प छिप गये। चद्रंमा, मूँगा, बिम्बाफल खिसिया गये, बिजली भयभीत हो उठी। गोपियाँ यमुना के तट पर कृष्ण से मिलने पर आनन्द की उमंग से भरी हुई थी। वे जाकर कृष्ण से मिलकर प्रेम के प्रवाह में बह उठी।
- कवि ने उपमानों में कल्पना शक्ति का परिचय दिया है। कृष्ण के प्रति गोपियों की आसक्ति तथा आस्था का भक्ति स्वरूप सौंदर्य चित्रण किया गया है।
- पद की भाषा ब्रजभाषा है। जिसमें प्रवाह और माधूर्य है।

(3) गए स्याम ग्वालिनि घर सूनै।

माखन खाइ, डारि सब गोरस, बासन फोरि किए सब चूनै।।

बडौ माट इक बहुत दिननि कौ, ताहि कर्‌यौ दस टुक।

सोवत लरिकनि छिरकि मही सौं, हँसत चले दै कूक।।

आइ गई ग्वालिनि तिहि औसर, निकसत हरि धरि पाए।

देखे घर बासन सब फूटे, दूध दही ढरकाए।।

दोउ भुज धरि गाढै करि लीन्हें, गई महरि के आगै।

सूरदास अब बसै कौन ह्यौं , पति रहि है ब्रज त्यागै।।

- **कठिन शब्दार्थ :–** गोरस– गायों का दूध आदि। बासन–बर्तन। फोरि– फोडकर। चूनै– टुकडे, चूर्ण। माट–मिट्टी का बडा घडा जैसा बर्तन। इक–एक । छिरकि –छिडककर । मही–धरती। कूक–किलकारी। तिहि– उस । औसर– अवसर। निकसत– निकले हुए। धरि–पकडना। ढरकाए– लुढकाये गये। पति– प्रतिष्ठा।
- कृष्ण ग्वालिन के घर जाकर उसके दूध–दही के बर्तन फोड आये। घर के बच्चों पर दूध दही छिडक दिया। ग्वालिन कृष्ण को पकडकर यशोदा के पास लाई और शिकायत की इसी का वर्णन है।
- **व्याख्याः–** सूरदास वर्णन करते हैं कि एक दिन कृष्ण एक ग्वालिन के सूने घर में गये। वहाँ उन्होनें मक्खन खाकर सारा दूध , दही जमीन पर गिरा दिया। बर्तनों को फोडकर उन्हें टूकडे टूकडे कर दिये। एक पुराना बडा मटका जिसमें निरन्तर माखन रखने के कारण वह चिकना व मजबूत हो गया था, उसके भी दस टूकडे कर दिये। जो बालक घर में सोए हुए थे उन पर छाछ छिडकी और कृष्ण हँसते ,आवाज करते हुए चल पडे। उसी समय ग्वालिन वहां आ गई। कृष्ण घर से निकल रहे थें तभी उसने उन्हें पकड लिया । उसने घर के अंदर देखा तो पता चला की सारे बर्तन टूटे पडे है। और दूध दही लुढकाया हुआ पडा है। ग्वालिन ने कृष्ण की दोनों भुजाऐं मजबूती से पकड ली और उनहें मैया यशोदा के आगे ले जाकर खडा कर दिया। सुरदास कहते है कि ग्वालिन ने यशोदा से कहा कि अब यहाँ कौन बसे ? अब यहाँ रहना तो ठीक नहीं है। अब हमारी प्रतिष्ठा ब्रज को छोड देने पर ही रह सकती है।
- अनुप्रास और आक्षेप अलंकार है।

✓ भम्रर गीत

BY- MAHESH KUMAR BAIRWA (LECTURER) 8440992186 GHSS GUDHLIYA

(1)आयौ घोष बडौ व्यौपारी।

लादि खेप गुन, ज्ञान–जोग की ब्रज में आय उतारी। ।

फाटक दै कर हाटक माँगत भौंरें निपट सुधारी।

धुर ही तें खोटो खायो है, लये फिरत सिर भारी।।

इनके कहे कौन डहकावै, ऐसी कौन अजानी।

अपनो दूध छाँडि को पीवै, खार कूप को पानी।।

ऊधो जाहु सवार यहाँ तें, वेगि गहरू जनि लावौ।

मुँह माँग्यो पैहो सूरज प्रभू साहुहि आनि दिखाओ।।

कठिन शब्दार्थ :– घोष–अहीरों की बस्ती। खेप– एक बार लाई गई गठरी। जोग–योग। फाटक– अनाज का भूसा। हाटक –स्वर्ण ,सोना। भोरे – जो समझे नहीं। निपट –बिल्कुल। धुर–शुरू से। अजानी– अज्ञानी। खार– नमक। कूप– कुआँ। बेगि– शीघ्र। गहरू– विलंब। जनि–मत, नही। पैहौ–पाओगे। आनि– लाकर।

प्रसंगः– प्रस्तुत पद सुरदास के भ्रमर गीत से लिया गया है। कृष्ण के मथुरा चले जाने पर वे फिर गोकुल न आये। उन्होने गोपिकाओं को समझाने के लिए अपने सखा ज्ञानी उद्धव को भेजा। उद्धव ने गोपिकाओं को योग साधना करने, कृष्ण की जगह निराकार ब्रह्म की उपासना करने का उपदेश दिया । तब उनके प्रति झुझँलाकर गोपिकाओं ने जो कुछ कहा, यहां उसका वर्णन है।

व्याख्या :– सूरदास वर्णन करते हैं कि एक गोपी दूसरी गोपियों से कहती है कि उद्धव के रूप में अहीरों की बस्ती में कोई बडा व्यापारी आया है। यह गुण, ज्ञान और योग को गठरी में बांधकर लाया है और उसे सबसे पहले ब्रज में उतारा है। वह ज्ञान योग जैसी फटकर (व्यर्थ वस्तु) देकर उसके बदले में हमसे (कृष्ण स्वरूप) सोने को मांग रहा है। इसके ऐसे व्यवहार से तो यही प्रतीत होता है कि इसने हमको भोला समझ लिया है। इसके व्यवहार और समझ को देखकर ऐसा लगता है कि इसने शुरू से ही खोटी कमाई का अन्न खाया है। तभी तो इसका सामान अब तक किसी ने नहीं खरीदा है और यह अपने सिर पर भारी बोझ लिए घुम रहा है। यहाँ ऐसा अज्ञानी कौन है जो इसके बहकावे में आ जायेगा। यह भगवान कृष्ण की उपासना छोडकर निर्गुण ब्रह्म की उपासना की बात कर रहा है। इसके अनुसार आचरण करने का मतलब होगा अपना दूध छोडकर खारे पानी के कुएँ का जल पीना। फिर गोपी उद्धव से कहती है कि उद्धव, आप यहां से शीघ्र चले जाओ। अब बिल्कुल देर मत लगाओ। तुम यदि प्रभु कृष्ण को यहाँ लाकर हमे उनके दर्शन करा दोगे तो तुम्हें मुँह माँगा इनाम दिया जाएगा।

(2) ऊधो! कोकिल कूजत कानन।

तुम हमको उपदेश करत हौं भस्म लगावन आनन।।

औरों सब तजि, सिंगी लै–लै टेरन चढन पखानन।

पै नित आनि पपीहा के मिस मदन हति निज बानन।।

हम तौ निपट अहीरि बाबरी, जोग दीजिए ज्ञाननि।

कहा कथत मामी के आगे, जानत नानी नानन।।

सुंदर स्याम मनोहर मूरति, भावति नीके गानन।

सूर मुकुति कैसे पूजति है, वा मुरली की तानन।।

BY- MAHESH KUMAR BAIRWA (LECTURER) 8440992186 GHSS GUDHLIYA

कठिन शब्दार्थ :–कोकिल–कोयल। कानन–वन। आनन– मुख। सिंगी– श्रृंगी बाजा, सींग का बना हुआ बाजा। टेरन– पुकारने के लिए। चढन–चढने। आनि–आकर । मिस –बहाने से । मदन –कामदेव। निज –अपनेपन। बानन–बाणों से। निपट–पूर्णतया। बावरी– नासमझ। भावति– अच्छी लगती हैं । नीके– सुन्दर।

व्याख्या– गोपियाँ उद्धव से कहती हैं उद्धव जी! सुनिए, वन में कोयल कूक रही है। बसंत के आगमन की सूचना दे रही है। बसंत के मादक और प्रेम जगााने वाले वातावरण में कुछ प्रेम की बातें कीजिए। आप तो हमसे कह रहे हैं कि हम अपने मुखों पर योगियों की भांति राख मल लें। सब कुछ त्याग कर हाथों में सींग की बनी तुरही लेकर, उसे बजाती हुई पर्वतों पर जाकर जोग साधना करे। परन्तु यह कामदेव पपीहे की पिउ पिउ के बहाने से हमारे वियोगी हद्यों में प्रेम जगाने वाले बाण मार रहा है। इसके लिए क्या करें। उद्धव हम तो अनपढ और बिल्कुल अज्ञानी अहिरनें (गोपिकाऐं) है। हम आपके ज्ञान, और योग को कैसे समझ पाएँगी। इसे तो आप ज्ञानियों को ही दीजिए। आपके इन योग और ज्ञान के उपदेशों को सुनकर हमें लगता है जैसे कोई मामी के आगे नानी और नाना (ननसाल) की बातें करे। आपके ज्ञान और योग की साधना से हम को मुक्ति या मोक्ष प्राप्त हो सकता है परन्तु हमें अपने प्रिय श्यामसुंदर की मुरली की मनमोहनी तानों के आगे , आपकी मुक्ति तुच्छ प्रतीत होती है। अतः आपका योग हमारे किसी काम नहीं है।

(3) ऊधौ! जाहु तुम्हैं हम जाने।

स्याम तुम्हें ह्याँ नाहिं पठाए, तुम हौ बीच भुलाने।।

ब्रजवासिन सों जोग कहत हौ, बातहु कहन न जाने।

बढ लागै न विवके तुम्हारो, ऐसे नए अयाने।।

हमसों कही लई सो सहिकै, जिय गुनि लेहु अपाने।

कहँ अबला कहँ दसा दिगंबर, संमुख करौ पहिचाने।।

साँच कहौ तुमको अपनी सौं, बूझति बात निदाने।

'सूर'स्याम जब तुम्हें पठाए, तब नेंकहू मुसुकाने।।

कठिन शब्दार्थ :– जाने –जान गई । पठाए– भेजे। बीच –रास्ते में। भुलाने –भुल गए हो। अयाने –अज्ञानी। गुनि लेहु– विचार करो, सोचो। दिगम्बर–वस्त्रहीन, नग्न। बुझति– पूछती है। निदाने – वास्तव में ,सच। नेकहु– तनिक भी।

व्याख्याः–गोपियां उद्धव से कह रही है कि वह मथुरा लौट जाए क्योंकि उन्होने उनकी योग्यता को पहचान लिया है। वे कहती है कि कृष्ण ने उनको यहाँ (ब्रज में) नहीं भेजा है। वह तो मार्ग में भटककर वहां चले आए है। यदि उनको कृष्ण ने भेजा होता तो वह भोले –भाले ,कृष्ण प्रेम, ब्रजवासियों को योग की शिक्षा नहीं देते। उनको तो इतनी भी समझ नहीं है कि किससे क्या बात कहनी चाहिए। गोपी उद्धव से कहती है– उद्धव जी आप चाहे कितने भी महान योगी है। पर आपका ज्ञान हमें बडा नहीं लगता । हमें तो लगता है कि आप अभी नौसिखिए है। आपको लोक व्यवहार का ज्ञान नहीं है।

चलो, आपने हम से जो कुछ योग और ज्ञान सम्बन्धी बाते कही, हमने तो आपको प्रिय कृष्ण का मित्र मानते हुए सहन कर लीं किन्तु तनिक आप अपने मन में विचार करके देखिए कि कहाँ तो दुर्बल तनम न वाली हम अबला स्त्रियां और आपके योगियों की नग्न रहने वाली दशा। क्या स्त्रियां योगियों की भांति लंगोटी बांधकर रह सकती है।

सच सच बताइए , आपको हमारी सौगंध है। जब कृष्ण ने आपकों ब्रज में भेजा था, तब क्या वह तनिक मुस्कुराए थे।? भाव यह है कि कहीं कृष्ण ने आपके साथ परिहास तो नहीं किया? आपके योग और ज्ञान के अंहकार की हंसी उडवाने को तो आपके मित्र ने ब्रज में नहीं भेज दिया ?

राग केदारौ

मैया मैं तौ चंद-खिलौना लैहौं ।
जैहौं लोटि धरनि पर अबहीं तेरी गोद न ऐहौं ॥
सुरभी कौ पय पान न करिहौं बेनी सिर न गुहैहौं ।
ह्वै हौं पूत नंद बाबा को तेरौ सुत न कहैहौं ॥
आगैं आउ बात सुनि मेरी बलदेवहि न जनैहौं ।
हँसि समुझावति कहति जसोमति नई दुलहिया दैहौं ॥
तेरी सौं मेरी सुनि मैया अबहिं बियाहन जैहौं ॥
सूरदास ह्वै कुटिल बराती गीत सुमंगल गैहौं ॥

भावार्थ श्यामसुन्दर कह रहे हैं) मैया! मैं तो यह चंद्रमा-खिलौना लूँगा (यदि तू इसे नहीं देगी तो) अभी पृथ्वी पर लोट जाऊँगा तेरी गोद में नहीं आऊँगा । न तो गैया का दूध पीऊँगा न सिर में चुटिया गुँथवाऊँगा । मैं अपने नन्दबाबा का पुत्र बनूँगा तेरा बेटा नहीं कहलाऊँगा । तब यशोदा हँसती हुई समझाती हैं और कहती हैं-आगे आओ मेरी बात सुनो यह बात तुम्हारे दाऊ भैया को मैं नहीं बताऊँगी । तुम्हें मैं नयी पत्नी दूँगी । यह सुनकर श्याम कहने लगे-) तू मेरी मैया है तेरी शपथ- सुन मैं इसी समय ब्याह करने जाऊँगा। सूरदास जी कहते हैं--प्रभो! मैं आपका कुटिल बाराती (बारात में व्यंग करने वाला) बनूँगा और (आपके विवाह में) मंगल के सुन्दर गीत गाऊँगा ।

भ्रमरगीत:गोपी-उद्धव

ऊधौ मन ना भये दस-बीस
एक हुतो सो गयौ स्याम संग, कौ आराधे ईस॥1॥

भ्रमर गीत में सूरदास ने उन पदों को समाहित किया है जिनमें मथुरा से कृष्ण द्वारा उद्धव को ब्रज संदेस लेकर भेजा जाता है और उद्धव जो हैं योग और ब्रह्म के ज्ञाता हैं उनका प्रेम से दूर दूर का कोई सरोकार नहीं है। जब गोपियाँ व्याकुल होकर उद्धव से कृष्ण के बारे में बात करती हैं और उनके बारे में जानने को उत्सुक होती हैं तो वे निराकार ब्रह्म और योग की बातें करने लगते हैं तो खीजी हुई गोपियाँ उन्हें काले भँवरे की उपमा देती हैं। बस इन्हीं करीब १०० से अधिक पदों का संकलन भ्रमरगीत या उद्धव-संदेश कहलाया जाता है।

कृष्ण जब गुरु संदीपन के यहाँ ज्ञानाजर्न के लिये गए थे तब उन्हें ब्रज की याद सताती थी। वहाँ उनका एक ही मित्र था उद्धव, वह सदैव रीत-िनीति की, निगुर्ण ब्रह्म और योग की बातें करता था। तो उन्हें चिन्ता हुई कि यह संसार मात्र विरिक्तयुक्त निगुर्ण ब्रह्म से

तो चलेगा नहीं, इसके लिये विरह और प्रेम की भी आवश्यकता है। और अपने इस मित्र से वे उकताने लगे थे कि यह सदैव कहता है , कौन माता, कौन पिता, कौन सखा, कौन बंधु। वे सोचते इसका सत्य कितना अपूर्ण और भ्रामक है। भला कहाँ यशोदा और नंद जैसे माता-पिता होने का सुख और राधा के साथ बीते पलों का आनंद। और तीनों लोकों में ब्रज के गोप-गोपियों के साथ मिलकर खेलने जैसा सुख कहाँ ? ऐसा नहीं है कि द्वारा उद्धव को ब्रज संदेस लेकर भेजते समय कृष्ण संशय में न थे , वे स्व्यं सोच रहे थे यह कैसे संदेस ले जाएगा जो कि प्रेम का ममर् ही नहीं समझता, कोरा ब्रह्मर्ज्ञान झाड़ता है।

तबहि उपंगसुत आई गए।
सखा सखा कछु अंतर नाहिं, भरि भरि अंक लए।।
अति सुन्दर तन स्याम सरीखो, देखत हिर पछताने ।
ऐसे कैं वैसी बुधी होती, ब्रज पठऊं मन आने।।
या आगैं रस कथा प्रकासौं, जोग कथा प्रकटाऊं।
सूर ज्ञान याकौ दृढ़ किरके, जुवतिन्ह पास पठाऊं॥2॥

तभी उपंग के पुत्र उद्धव आ जाते हैं। कृष्ण उन्हें गले लगाते हैं।

दोनों सखाओं में खास अन्तर नहीं। उद्धव का रंग-रूप कृष्ण के समान ही है। पर कृष्ण उन्हें देख कर पछताते हैं कि इस मेरे समान रूपवान युवक के पास काश , प्रेमपूर्ण बुद्धि भी होती। तब कृष्ण मन बनाते हैं कि क्यों न उद्धव को ब्रज संदेस लेकर भेजा जाए, संदेस भी पहुँच जाएगा और इसे प्रेम का पाठ गोपियाँ भली भाँत पढ़ा देंगी। तब यह जान सकेगा प्रेम का ममर्।

उधर उद्धव सोचते हैं कि वे विरह में जल रही गोपियों को निगुर्ण ब्रह्म के प्रेम की शिक्षा दे कर उन्हें इस सांसारिक प्रेम से की पीड़ा मुक्ति से मुक्ति दिला देंगे। कृष्ण मन ही मन मुस्का कर उन्हें अपना पत्र थमाते हैं कि देखते हैं कि कौन किसे क्या सिखा कर आता है।

उद्धव पत्र गोपियों को दे देते हैं और कहते हैं कि कृष्ण ने कहा है कि -

सुनौ गोपी हिर कौ संदेस।
किर समाधि अंतर गति ध्यावहु, यह उनको उपदेस।।
वै अविगत अविनासी पूरन, सब घट रहे समाई।
तत्वज्ञान बिनु मुक्ति नहीं, वेद पुराननि गाई।।
सगुन रूप तिज निरगुन ध्यावहु, इक चित्त एक मन लाई।
वह उपाई किर बिरह तरौ तुम, मिले ब्रह्म तब आई।।
दुसह संदेस सुन माधौ को, गोपि जन बिलखानी।
सूर बिरह की कौन चलावै, बूड़ितं मनु बिन पानी॥3॥

हे गोपियों, हिर का संदेस सुनो। उनका यही उपदेस है कि समाधि लगा कर अपने मन में

निगुर्ण निराकार ब्रह्म का ध्यान करो। यह अज्ञेय , अविनाशी पूर्ण सबके मन में बसा है। वेद पुराण भी यही कहते हैं कि तत्वज्ञान के बिना मुक्ति संभव नहीं। इसी उपाय से तुम विरह की पीड़ा से छुटकारा पा सकोगी। अपने कृष्ण के सगुण रूप को छोड़ उनके ब्रह्म निराकार रूप की अराधना करो। उद्धव के मुख से अपने प्रिय का उपदेश सुन प्रेममार्गी गोपियाँ व्यथित हो जाती हैं। अब विरह की क्या बात वे तो बिन पानी पीड़ा के अथाह सागर डूब गईं।

तभी एक भ्रमर वहाँ आता है तो बस जली-भुनी गोपियों को मौका मिल जाता है और वह उद्धव पर काला भ्रमर कह कर खूब कटाक्ष करती हैं।

रहु रे मधुकर मधु मतवारे।
कौन काज या निरगुन सौं, चिरजीवहू कान्ह हमारे।।
लोटत पीत पराग कीच में, बीच न अंग सम्हारै।
भारम्बार सरक मदिरा की, अपरस रटत उघारे।।
तुम जानत हो वैसी ग्वारिनी, जैसे कुसुम तिहारे।
घरी पहर सबहिनी बिरनावत, जैसे आवत कारे।।
सुंदर बदन, कमल-दल लोचन, जसुमति नंद दुलारे।
तन-मन सूर अरिप रहीं स्यामह,ि का पै लेहिं उधारै॥4॥

गोपियाँ भ्रमर के बहाने उद्धव को सुना-सुना कर कहती हैंर् हे भंवरे। तुम अपने मधु पीने में व्यस्त रहो , हमें भी मस्त रहने दो। तुम्हारे इस निरगुण से हमारा क्या लेना-देना। हमारे तो सगुण साकार कान्हा चिरंजीवी रहें। तुम स्वयं तो पराग में लोट लोट कर ऐसे बेसुध हो जाते हो कि अपने शरीर की सुध नहीं रहती और इतना मधुरस पी लेते हो कि सनक कर रस के विरुद्ध ही बातें करने लगते हो। हम तुम्हारे जैसी नहीं हैं कि तुम्हारी तरह फूल-फूल पर बहकें, हमारा तो एक ही है कान्हा जो सुन्दर मुख वाला, नीलकमल से नयन वाला यशोदा का दुलारा है। हमने तो उन्हीं पर तन-मन वार दिया है अब किसी निरगुण पर वारने के लिये तन-मन किससे उधार लें?

उधौ जोग सिखावनि आए।
सृंगी भस्म अथारी मुदर्ा, दै ब्रजनाथ पठाए।।
जो पै जोग लिख्यौ गोपिन कौ, कत रस रास खिलाए।
तब ही क्यों न ज्ञान उपदेस्यौ, अधर सुधारस लाए।।
मुरली शब्द सुनत बन गवनिं, सुत पितगृह बिसराए।
सूरदास संग छांिड स्याम कौ, हमहिं भये पछताए॥5॥

गोपियाँ कहती हैंर् हे सखि! आओ, देखो ये श्याम सुन्दर के सखा उद्धव हमें योग सिखाने आए हैं। स्वयं ब्रजनाथ ने इन्हें श्रृंगी, भस्म, अथारी और मुद्रा देकर भेजा है। हमें तो खेद है कि जब श्याम को इन्हें भेजना ही था तो , हमें अदभुत रास का रसमय आनंद क्यों दिया था? जब वे हमें अपने अथरों का रस पिला रहे थे तब ये ज्ञान और योग की बातें कहाँ गईं थीं? तब हम श्री कृष्ण की मुरली के स्वरों में सुधबुध खो कर अपने बच्चों और

पित के घर को भुला दिया करती थीं। श्याम का साथ छोड़ना हमारे भाग्य में था ही तो हमने उनसे प्रेम ही क्यों किया अब हम पछताती हैं।

मधुबनी लोगि को पितयाई।
मुख औरै अंतरगति औरै, पितयाँ लिख पठवत जु बनाई।।
ज्यौं कोयल सुत काग जियावै, भाव भगति भोजन जु खवाई।
कुहुकि कुहुकि आएं बसंत रितु, अंत मिलै अपने कुल जाई।।
ज्यौं मधुकर अम्बुजरस चाख्यौ, बहुरि न बूझे बातें आई।
सूर जहाँ लगि स्याम गात हैं, तिनसौं कीजै कहा सगाई॥6॥

कोई गोपी उद्धव पर व्यंग्य करती है।मथुरा के लोगों का कौन विश्वास करे ? उनके तो मुख में कुछ और मन में कुछ और है। तभी तो एक ओर हमें स्नेहिल पत्र लिख कर बना रहे हैं दूसरी ओर उद्धव को जोग के संदेस लेके भेज रहे हैं। जिस तरह से कोयल के बच्चे को कौआ प्रेमभाव से भोजन करा के पालता है और बसंत रितु आने पर जब कोयलें कूकती हैं तब वह भी अपनी बिरादरी में जा मिलता है और कूकने लगता है। जिस प्रकार भंवरा कमल के पराग को चखने के बाद उसे पूछता तक नहीं। ये सारे काले शरीर वाले एक से हैं, इनसे सम्बंध बनाने से क्या लाभ?

निरगुन कौन देस को वासी।
मधुकर किह समुझाई सौंह दै, बूझतिं सांिच न हांसी।।
को है जनक, कौन है जननि, कौन नारि कौन दासी।
कैसे बरन भेष है कैसो, किहं रस मैं अभिलाषी।।
पावैगो पुनि कियौ आपनो, जो रे करेगौ गांसी।
सुनत मौन हवै रहयौ बावरो, सूर सबै मति नासी॥6॥

अब गोपियों ने तकर् कियार् हाँ तो उद्धव यह बताआे कि तुम्हारा यह निगुर्ण किस देश का रहने वाला है ? सच सौगंध देकर पूछते हैं , हंसी की बात नहीं है। इसके माता-पिता , नारी-दासी आखिर कौन हैं ? कैसा है इस निरगुण का रंग-रूप और भेष ? किस रस में उसकी रुिच है ? यदि तुमने हमसे छल किया तो तुम पाप और दंड के भागी होगे। सूरदास कहते हैं कि गोपियों के इस तकर् के आगे उद्धव की बुद्धि कुंद हो गई। और वे चुप हो गए। लेकिन गोपियों के व्यंग्य खत्म न हुए वे कहती रहीं -

जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहे।
मूरि के पातिन के बदलै, कौ मुक्ताहल देहै।।
यह ब्यौपार तुम्हारो उधौ, ऐसे ही धरयौ रेहै।
जिन पैं तैं लै आए उधौ, तिनहीं के पेट समैहै।।
दाख छांिड के कटुक निम्बौरी, कौ अपने मुख देहै।
गुन किर मोहि सूर साँवरे, कौ निरगुन निरवेहै॥8॥

BY- MAHESH KUMAR BAIRWA (LECTURER) 8440992186 GHSS GUDHLIYA

हे उद्धव ये तुम्हारी जोग की ठगविद्या, यहाँ ब्रज में नहीं बिकने की। भला मूली के पत्तों के बदले माणक मोती तुम्हें कौन देगा ? यह तुम्हारा व्यापार ऐसे ही धरा रह जाएगा। जहाँ से ये जोग की विद्या लाए हो उन्हें ही वापस सिखा दो , यह उन्हीं के लिये उचित है। यहाँ तो कोई ऐसा बेवकूफ नहीं कि किशमिश छोड़ कर कड़वी निंबौली खाए! हमने तो कृष्ण पर मोहित होकर प्रेम किया है अब तुम्हारे इस निरगुण का निवार्ह हमारे बस का नहीं।

काहे को रोकत मारग सूधो।
सुनहु मधुप निरगुन कंटक तै, राजपंथ क्यौं रूंथौ।।
कै तुम सिखि पठए हो कुब्जा, कहयो स्यामघनहूं धौं।
वेद-पुरान सुमृति सब ढूंढों, जुवतिनी जोग कहूँ धौं।।
ताको कहां परैंखों की जे, जाने छाछ न दूधौ।
सूर मूर अक्रूर गयौ लै, ब्याज निवैरत उधौ॥9॥

गोपियां चिढ़ कर पूछती हैं कि कहीं तुम्हें कुबजा ने तो नहीं भेजा ? जो तुम स्नेह का सीधा साधा रास्ता रोक रहे हो। और राजमागर् को निगुर्ण के कांटे से अवरुद्ध कर रहे हो! वेद-पुरान, स्मृति आदि गर्ंथ सब छान मारो क्या कहीं भी युवतियों के जोग लेने की बात कही गई है ? तुम जरूर कुब्जा के भेजे हुए हो। अब उसे क्या कहें जिसे दूध और छाछ में ही अंतर न पता हो। सूरदास कहते हैं कि मूल तो अक्रूर जी ले गए अब क्या गोपियों से ब्याज लेने उद्धव आए हैं?

उधौ मन ना भए दस बीस।
एक हुतौ सौ गयौ स्याम संग, को आराधे ईस।।
इंदर्ी सिथिल भई केसव बिनु, ज्यौं देही बिनु सीस।
आसा लागि रहित तन स्वासा, जीवहिं कोटि बरीस।
तुम तौ सखा स्याम सुंदर के, सकल जोग के ईस।
सूर हमारै नंद-नंदन बिनु, और नहीं जगदीस॥10॥

अब थक हार कर गोपियाँ व्यंग्य करना बंद कर उद्धव को अपने तन मन की दशा कहती हैं। उद्धव हतप्रभ हैं, भक्ति के इस अदभुत स्वरूप से। हे उद्धव हमारे मन दस बीस तो हैं नहीं, एक था वह भी श्याम के साथ चला गया। अब किस मन से ईश्वर की अराधना करें? उनके बिना हमारी इंिदर्यां शिथिल हैं , शरीर मानो बिना सिर का हो गया है , बस उनके दरशन की क्षीण सी आशा हमें करोड़ों वषर् जीवित रखेगी। तुम तो कान्ह के सखा हो, योग के पूर्ण ज्ञाता हो। तुम कृष्ण के बिना भी योग के सहारे अपना उद्धार कर लोगे। हमारा तो नंद कुमार कृष्ण के सिवा कोई ईश्वर नहीं है।

गोपी उद्धव संवाद के ऐसे कई कई पद हैं जो कटाक्षों , विरह दशाआें, राधा के विरह और निरगुण का पिरहास और तकर्-कुतकर् व्यक्त करते हैं। सभी एक से एक उत्तम हैं पर यहाँ सीमा है लेख की।

अंततः गोपियाँ राधा के विरह की दशा बताती हैं, ब्रज के हाल बताती हैं। अंततः उद्धव का निरगुण गोपियों के प्रेममय सगुण पर हावी हो जाता है और उद्धव कहते हैं -

अब अति चकितवंत मन मेरौ।
आयौ हो निरगुण उपदेसन, भयौ सगुन को चैरौ।।
जो मैं ज्ञान गहयौ गीत को, तुमहिं न परस्यौं नेरौ।
अति अज्ञान कछु कहत न आवै, दूत भयौ हिर कैरौ।।
निज जन जानि-मानि जतननि तुम, कीन्हो नेह घनेरौ।
सूर मधुप उठि चले मधुपुरी, बोरि जग को बेरौ॥11॥

कृष्ण के प्रति गोपियों के अनन्य प्रेम को देख कर उद्धव भाव विभोर होकर कहते हैंर् मेरा मन आश्चयर्चकित है कि मैं आया तो निगुर्ण ब्रह्म का उपदेश लेकर था और प्रेममय सगुण का उपासक बन कर जा रहा हूँ। मैं तुम्हें गीता का उपदेश देता रहा , जो तुम्हें छू तक न गया। अपनी अज्ञानता पर लज्जित हूँ कि किसे उपदेश देता रहा जो स्वयं लीलामय हैं। अब समझा कि हिर ने मुझे यहाँ मेरी अज्ञानता का अंत करने भेजा था। तुम लोगों ने मुझे जो स्नेह दिया उसका आभारी हूँ। सूरदास कहते हैं कि उद्धव अपने योग के बेड़े को गोपियों के प्रेम सागर में डुबो के , स्वयं प्रेममागर् अपना मथुरा लौट गए।

इहिं अंतर मधुकर इक आयौ ।
निज स्वभाव अनुसार निकट ह्वै,सुंदर सब्द सुनायौ ॥
पूछन लागीं ताहि गोपिका, कुबिजा तोहिं पठायौ ।
कीधौं सूर स्याम सुंदर कौं, हमै संदेसौ लायौ ॥12॥

(मधुप तुम) कहौ कहाँ तैं आए हौ ।
जानति हौं अनुमान आपनै, तुम जदुनाथ पठाए हौ ॥
वैसेइ बसन, बरन तन सुंदर, वेइ भूषन सजि ल्याए हौ ।
लै सरबसु सँग स्याम सिधारे, अब का पर पहिराए हौ ।
अहो मधुप एकै मन सबकौ, सु तौ उहाँ लै छाए हौ ।
अब यह कौन सयान बहुरि ब्रज, ता कारन उठि धाए हौ ॥
मधुबन की मानिनी मनोहर, तहीं जात जहँ भाये हौ ।
सूर जहाँ लौं स्याम गात हैं , जानि भले करि पाए हौ ॥13॥

रहु रे मधुकर मधु मतवारे ।
कौन काज या निरगुन सौं, चिर जीवहु कान्ह हमारे ॥
लोटत पीत पराग कीच मै, बीच न अंग सम्हारे ।

बारंबार सरक मदिरा की, अपरस रटत उघारे ॥
तुम जानत हौ वैसी ग्वारिनि, जैसे कुसुम तिहारे ।
घरी पहर सबहिनि बिरमावत, जेते आवत कारे ॥
सुंदर बदन कमल-दल लोचन, जसुमति नंददुलारे ।
तन मन सूर अरपि रहीं स्यामहिं, का पै लेहिं उघारे ॥14॥

मधुकर हम न होहिं वै बेलि ।
जिन भजि तजि तुम फिरत और रँग, करन कुसुम-रस केलि ॥
बारे तैं बर बारि बनी हैं, अरु पोषी पिय पानि ।
बिनु पिय परस प्रात उठि फूलत, होति सदा हित हानि ॥
ये बेली बिरहीं बृंदावन; उरझी स्याम तमाल ।
प्रेम-पुहुप-रस-बास हमारे, बिलसत मधुप गोपाल ॥
जोग समीर धीर नहिं डोलतिं,रूप डार दृढ़ लागीं ।
सूर पराग न तजहिं हिए तें, श्री गुपाल अनुरागीं ॥15॥